एम.डी. इब्राहिम और अन्य

बनाम

बिहार राज्य और अन्य

(2009 की आपराधिक अपील संख्या 1695)

04 सितम्बर, 2009

आर.वी. रवींद्रन और और आर.एम. लोढ़ा न्यायाधिपतिगण

दण्ड संहिता, 1860- धाराएं 420, 467, 471, 504, 323 और 341 के तहत परिवाद- परिवादी ने आरोप लगाया कि उसके स्वामित्व वाली भूमि को एक अभियुक्त ने दूसरे अभियुक्त को बेच दिया था- विक्रय विलेख के लिपिक/मुंशी, गवाह और विक्रय विलेख के स्टाम्प विक्रेताओं के खिलाफ भी आरोप विरचित किए गए। उन्मोचन का आवेदन खारिज- आवेदन अन्तर्गत धारा 482 दण्ड प्रक्रिया संहिता खारिज- अपील में अभिनिर्धारित किया गयाः परिवाद के अभिकथन से धारा 420, 467, 471 और 504 का आरोप नहीं बनता इसलिए, इसके तहत आरोप अपास्त कर दिया गया- हालाँकि, परिवाद तकनीकी रूप से अन्तर्गत धारा 323, 341 भारतीय दण्ड

संहिता अपराधों के सामग्री को दर्शाती है। इसलिए, इसके तहत आरोप, बाधित नहीं- दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973- धारा 482।

दूसरे प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी 1 से 3 (अभियुक्त 1 से 3) और दो अन्य, के खिलाफ मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष यह आरोप लगाते हुए परिवाद पेश किया कि पहले अभियुक्त ने भूमि के एक हिस्से के सम्बन्ध में दूसरे अभियुक्त के पक्ष में दो पंजीकृत विक्रय विलेख निष्पादित किए थे जिसका वह स्वयं स्वामी था। तीसरा, चौथा और पाँचवा अभियुक्त गवाह, लिपिक/मुंशी और विक्रय विलेख के स्टांप विक्रेता थे जिन्होंने विक्रय विलेख और उक्त दस्तावेजों को कूटरचित करने के लिए अभियुक्त 1 और 2 के साथ साजिश रची थी। जब कथित कूटरचना के बारे में उसने अभियुक्त 1 और 2 का विरोध किया, तो उन्होंने उसके साथ दुर्व्यवहार किया और उसे मारा।

मजिस्ट्रेट ने भारतीय दण्ड संहिता की धाराओं 323, 341, 420, 467, 471 और 504 के तहत अपराधों का प्रसंज्ञान लिया और परिवाद दण्ड प्रक्रिया संहिता के अन्तर्गत धारा 156 (3) अन्वेषण हेतु भेजा। इसके आधार पर एक प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज की गयी। एक आरोप- पत्र दाखिल किया गया। अभियुक्त ने उन्मोचन करने के लिए आवेदन किया। पहले अभियुक्त ने स्वामी होने का दावा किया और कथन किया कि उसने सद्भावना में भूमि बेची थी। उसने यह भी कहा कि परिवाद अगर भले ही

सच भी मान लिया जाए तो केवल एक सिविल विवाद को उत्पन्न करेगी और किसी अपराध का गठन नहीं करती। मजिस्ट्रेट ने उन्मोचन के लिए आवेदन को अस्वीकार कर दिया यह मानते हुए कि आरोप विरचित करने के लिए पर्याप्त सामग्री थी। अभियुक्तगण ने इसके बाद दण्ड प्रक्रिया संहिता के अन्तर्गत धारा 482 का एक आवेदन दायर किया। उच्च न्यायालय ने याचिका को खारिज कर दिया। इसलिए, वर्तमान अपील दायर की गयी।

आंशिक रूप से अपील को स्वीकार करते हुए, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया-

1. आपराधिक न्यायालयों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि उनके समक्ष कार्यवाही का अंकों को बटोरना या सिविल विवादों को निपटाने के लिए पक्षकारों पर दबाव डालने के लिए नहीं किया जाना चाहिए। लेकिन साथ ही, यह भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि सिविल प्रकृति के कई विवादों में आपराधिक तत्व भी शामिल हो सकते हैं और यदि ऐसा है, तो उस पर आपराधिक मुकदमा चलाया जाये, भले ही वे सिविल विवादों की श्रेणी में क्यों न आते हों। (पैरा 7)(1261 डी- ई)

जी. सागर सूरी बनाम उत्तरप्रदेश 2000 (2) ऐस.सी.सी. 636 इंडियन आयल कॉर्पोरेशन बनाम एनईपीसी इंडिया लिमिटेड 2006(6) एस सी सी 736- के निर्णयों पर भरोसा किया।

2.1 भारतीय दण्ड संहिता की धारा 467, 471 के अपराध के लिए पूर्ववर्ती शर्त "कूटरचना" है, कूटरचना के लिए पूर्ववर्ती शर्त मिथ्या दस्तावेज़ (या मिथ्या इलेक्ट्रोनिक रिकॉर्ड या उसका भाग/हिस्सा) बनाना है। भारतीय दण्ड संहिता की धारा 464 के तहत, एक व्यक्ति ने मिथ्या दस्तावेज़ बनाया यह तब कहा जायेगा यदि (i) उसने किसी अन्य व्यक्ति होने का या किसी और के होने या किसी और द्वारा अधिकृत होने का दावा करते हुए दस्तावेज़ निष्पादित किया, या (ii) उसने किसी दस्तावेज़ में बदलाव या छेड़छाड़ की, या (iii) उसने धोखे से दस्तावेज़ ऐसे व्यक्ति से प्राप्त किया जो अपनी इंद्रियों पर नियंत्रण में नहीं है। (पैरा 9और 11)(1263- जी, 1264ई- एफ)

2.2. प्रथम अपीलार्थी द्वारा निष्पादित विक्रय विलेख, स्पष्ट रूप से "मिथ्या दस्तावेजों" की दूसरी और तीसरी श्रेणियों के अन्तर्गत नहीं आते हैं। 'मिथ्या दस्तावेजों' को प्रथम श्रेणी में लाने के लिए यह पर्याप्त नहीं है कि किसी दस्तावेज़ को कपटपूर्वक या बेईमानी से बनाया या निष्पादित किया गया हो। एक अन्य आवश्यकता यह है कि दस्तावेज़ इस आशय से बनाया गया हो कि यह विश्वास दिलाया जाये कि ऐसा दस्तावेज़ किसी व्यक्ति द्वारा या उसके प्राधिकृत द्वारा बनाया या निष्पादित किया गया था, जिसके द्वारा या जिसके प्राधिकरण द्वारा वह जानता है कि जब कोई व्यक्ति किसी ऐसी सम्पत्ति का दावा करते हुए दस्तावेज़ निष्पादित करता है जो

उसकी नहीं है वह यह दावा नहीं कर रहा है कि वह कोई और न ही वह यह दावा कर रहा है कि वह किसी और द्वारा अधिकृत है। इसलिए, ऐसे दस्तावेज़ का निष्पादन (जिसका तात्पर्य कुछ ऐसी सम्पत्ति से है जिसका वह स्वामी नहीं है) मिथ्या दस्तावेज़ का निष्पादन नहीं है जैसा कि धारा 464 भारतीय दण्ड संहिता में परिभाषित है। अगर जो निष्पादित किया जाता है वह मिथ्या दस्तावेज़ नहीं है, तो कोई कूटरचना नहीं है और न ही भारतीय दण्ड संहिता की धारा 467, 471 आकर्षित होती है। (पैरा 12) (1264 जी, 1265 सी.- एफ.)

3.1. भारतीय दण्ड संहिता की धारा 420 के तहत अपराध का गठन करने के लिए, केवल छल ही नहीं होना चाहिए, बल्कि इसके परिणामस्वरूप, अभियुक्त द्वारा बेईमानी से किसी व्यक्ति को प्रवंचित करना है (i) किसी व्यक्ति को कोई सम्पत्ति परिदत्त के लिए, या (ii) किसी मूल्यवान प्रतिभूति को पूर्णतः या अंतिम रूप से विरचित परिवर्तित या नष्ट करने के लिये (या कुछ भी हस्ताक्षरित या मुहरबंद और जो एक मूल्यवान प्रतिभूति में परिवर्तित होने में सक्षम है) [पैरा 13] [1266- बी- सी]

3.2. परिवादी का मामला यह नहीं है कि किसी अभियुक्त ने मिथ्या या भ्रामक अभ्यावेदन देकर या किसी कार्य या लोप करके उसे धोखा देने की कोशिश की हो और न ही किसी व्यक्ति द्वारा उसे बनाये रखने के लिए सहमति देना या जानबूझकर उसे ऐसा करने या करने से रोकने के लिए

उत्प्रेरित करना या कुछ जो वह नहीं करता या लोप करता अगर वह प्रवन्चित नहीं किया गया हो और न ही परिवादी ने पहले यह आरोप लगाया कि प्रथम अपीलार्थी ने परिवादी होने का नाटक/दिखावा किया हो जब उसने विक्रय विलेखों को निष्पादित किया। इसलिए, यह नहीं कहा जा सकता है कि विक्रय विलेखों को निष्पादित करने के कार्य में पहले अभियुक्त ने दूसरे अभियुक्त के पक्ष में कर्ता के नाते या तीसरे, चौथे और पाँचवें अभियुक्तों द्वारा विक्रय विलेखों के संबंध में परिवादी को किसी भी मामले में धोखा दिया हो। जैसा कि भारतीय दण्ड संहिता की धारा 415 में 'कपटपूर्वक' के अवयवों में कहा गया है अतः यह नहीं कहा जा सकता है कि भारतीय दण्ड संहिता की धाराओं 417, 418, 419 या 420 में अपराध कारित किया हो। [पैरा 14] [1266- ई- एच; 1267- ए]

4.1. जब न्यायालय कहता है कि किसी व्यक्ति द्वारा विक्रय विलेख का निष्पादन, जो किसी संपत्ति को व्यक्त, ऐसी सम्पत्ति को अन्तरित करने के लिए अभिप्रेत है उसकी संपत्ति नहीं है, वह मिथ्या दस्तावेज़ नहीं बना रही है और इसलिए कूटरचना नहीं, इसे इस धारणा के रूप में नहीं समझा जाना चाहिए कि ऐसा कार्य कभी भी आपराधिक अपराध नहीं हो सकता है। यदि कोई व्यक्ति यह जानते हुए संपत्ति बेचता है कि वह उसकी नहीं है, और इस तरह उस व्यक्ति से कपटपूर्वक करता है जिस व्यक्ति के साथ कपट किया गया जो कि खरीदार है, परिवाद कर सकता है कि विक्रेताओं

ने कपटपूर्ण कार्य किया है। लेकिन एक तीसरा पक्ष जो विलेख के तहत खरीदार नहीं है, ऐसा परिवाद करने में सक्षम नहीं हो सकता है। [पैरा 15] [1267- बी- डी]

4.2. कपट करना या कपटपूर्वक से कुछ करना अपने आप में भारतीय दण्ड संहिता के तहत अपराध नहीं है, लेकिन कपटपूर्वक से (या कपटपूर्वक और बेईमानी से) विभिन्न कार्य अपराध कारित करते हैं। केवल यह आरोप लगाने या दिखाने से कि किसी व्यक्ति ने कपटपूर्वक कार्य किया है तो यह नहीं माना जा सकता है कि उसने भारतीय दण्ड संहिता या किसी अन्य कानून के तहत दंडनीय अपराध किया है जब तक कि उस कपटपूर्वक कार्य को भारतीय दण्ड संहिता या अन्य कानून के तहत अपराध के रूप में निर्दिष्ट नहीं किया गया हो। [पैरा 16] [1268- सी]

डॉ. विमला बनाम दिल्ली प्रशासन ए. आई. और 1963 ऐस. सी 1572; उत्तर प्रदेश राज्य बनाम रणजीत सिंह 1999 (2) ऐस. सी. सी. 617, संदर्भित किये गये।

5. परिवाद में लगाए गए आरोप भारतीय दण्ड संहिता की धारा 504 के तहत किसी अपराध कि सामाग्री का पता नहीं लगते हैं। धारा 504 शांति भंग कराने को प्रकोपित करने के आशय का अपमान करती है। परिवाद में आरोप है कि जब उसने अभियुक्त 1 और 2 से विक्रय विलेखों

के बारे में पूछताश की तो उन्होंने कहा कि वे भूमि का कब्जा विक्रय विलेख के तहत प्राप्त करेंगे और उसे जो करना है वह कर ले। अभियुक्त 1 और 2 के द्वारा कही गयी बातों से यह नहीं कहा जा सकता कि उन्होंने अपमान करने के आशय से शांति को प्रकोपित किया हो। अभियुक्तों के कथन भले ही सत्य क्यों न हो तो भी वह केवल एक कथन था जो कि पहले अपीलार्थी द्वारा दूसरे अपीलार्थी के पक्ष में विक्रय विलेखों के निष्पादन के परिणाम का उल्लेख करता था। [पैरा 17] [1269- डी- जी]

6. परिवाद में अभिकथन यदि सच भी मान लिये जाये तो भी भारतीय दण्ड संहिता की धाराओं 420, 467, 471 और 504 के तहत कोई अपराध नहीं बनता है, लेकिन तकनीकी रूप से भारतीय दण्ड संहिता के अन्तर्गत धारा 341 के तहत गलत दोष- अवरोध व धारा 323 की सामग्री दिखाता है। मजिस्ट्रेट के आदेश को निरस्त कर दिया जाता है। जहाँ तक भारतीय दण्ड संहिता की अन्तर्गत धाराओं 420, 467, 471 और 504 के अपराधों का सम्बन्ध है उन धाराओं के तहत लगाए आरोपों को भी खारिज कर दिये जाते हैं। भारतीय दण्ड संहिता की धाराएं 323 और 341 को यथावत छोड दिया जाता है।

[पैरा 18 और 19] [1269- एच; 1270- ए- सी]

परिवाद कानून संदर्भ

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकारः आपराधिक अपील संख्या 1695/2009

पटना उच्च न्यायालय के आपराधिक विविध संख्या 10948/2006 में दिनाँक 22.05.2007 के निर्णय और आदेश से।

श्री गौरव अग्रवाल, अपीलार्थियों की ओर से।

श्री गोपाल सिंह, विमला सिन्हा और अमित पवन, अप्रत्यार्थियों की ओर से।

न्यायालय का निर्णय माननीय **श्री आर.वी. रविन्द्रन, न्यायाधिपति** द्वारा दिया गया-

1. अनुमति दी गई। उभयपक्षों के विद्वान अधिवक्तोओं को सुना गया।

2. दूसरे प्रत्यर्थी ने, अपीलार्थी 1 से 3 (अभियुक्त 1 से 3) और दो अन्य, के खिलाफ मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, मधुबनी के समक्ष परिवाद दर्ज की, जिसमें आरोप लगाया गया कि वह खेतों नंबर 715 खसरा नंबर 1971 और 1973 के 1 बीघा, 5 खेतों और 18 फुट/धुर का स्वामी है। पहला अभियुक्त, जिसका उक्त भूमि से कोई संबंध नहीं था और जिसका उस पर कोई स्वामित्व नहीं था, ने उक्त भूमि के एक हिस्से- 8 खाते और 13 फुट/धुर के संबंध में दूसरे अभियुक्त के पक्ष में दिनांक 2.6.2003 को दो पंजीकृत विक्रय विलेख निष्पादित किए थे और यह कि तीसरे, चौथे और

पांचवें अभियुक्त ने विक्रय- पत्र के क्रमशः गवाह, लिपिक/मुंशी और स्टांप विक्रेताओं होते हुए उक्त दस्तावेजों को कूटरचित करने के लिए अभियुक्त 1 और 2 के साथ षडयन्त्र रचा; और जब उसने अभियुक्त 1 और 2 को उक्त कूटरचना के बारे में बतोया, तो उन्होंने उसके साथ दुर्व्यवहार किया और उसे मुक्कों से मारा और उससे कहा कि वह जो चाहे कर सकता है, लेकिन वे उक्त दस्तावेजों के आधार पर जमीन पर कब्जा ले लेंगे।

3. विद्वान मजिस्ट्रेट ने आदेश दिनांक 19.7.2003 द्वारा भारतीय दंड संहिता की धाराओं 323, 341, 420, 467, 471 और 504 के तहत अपराधों का प्रसंज्ञान लिया और परिवाद को दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 156(3) के तहत अनुसंधान के लिए भेजा। इसके आधार पर दिनांक 10.10.2003 को पंडौल थाने में प्राथमिकी दर्ज की गयी थी। अनुसंधान के बाद 4.9.2004 को आरोप पत्र दायर किया गया। अभियुक्त ने उन्मोचित करने के लिए आवेदन किया। पहले अभियुक्त के अनुसार, परिवादी और पहला अभियुक्त चचेरे भाई- बहन थे; बद्री मियां (परिवादी के दादा) और मिठू मियां (पहले अभियुक्त के नाना) भाई थे और वे प्लॉट नंबर 1973 और 1971 के मालिक थे; उक्त भूखंड बद्री मियां के बेटे (परिवादी के पितो) और मुथु मियां के बच्चों को विरासत में मिले थे, जिनमें से एक गिरजा, पहले अभियुक्त की मां थी; पारिवारिक समझौते के अनुसार, उक्त भूखंड का एक हिस्सा गिरजा के हिस्से में आया और वह हिस्सा उसके पति के कब्जे

में था, जिसने इसे अपने नाम पर नामान्तरण करा लिया था और भू-राजस्व का भुगतोन कर रहा था; और उसकी मृत्यु के बाद, उक्त भूमि उसके बेटे के कब्जे में आ गई- पहला अभियुक्त; कि उसका नाम उसके पितो के स्थान पर दर्ज किया गया था, और वह भूमि के उक्त हिस्से के संबंध में भू- राजस्व का भुगतोन कर रहा था; और उसने सद्भावनापूर्वक से जमीन का एक हिस्सा 8 खेतों और 13 फुट/धुर दूसरे अभियुक्त को बेच दिया; जो विक्रय- पत्र वैध था, और परिवादी ने केवल उसे परेशान करने के लिए झूठी शिकायत दर्ज की थी। अन्य अभियुक्तगण ने किसी भी अपराध में मिलीभगत या किसी अपराध के सहभागितो से इन्कार किया। यह भी तर्क दिया गया कि परिवादी द्वारा लगाए गए आरोप भले ही सच मान लिए जाएं तो भी केवल एक सिविल विवाद को ही उत्पन्न करेगा और भारतीय दण्ड संहिता या किसी अन्य कानून के तहत कोई दंडनीय अपराध नहीं होगा।

4. अभियोजन पक्ष ने उक्त आवेदन का विरोध करते हुए तर्क दिया कि अनुसंधान से प्रमाणित है कि बेचा गया प्लॉट परिवादी के दादा बद्री को आवंटित भूमि का एक हिस्सा था, और पहले अभियुक्त ने अपने स्वामित्व के समर्थन में कोई दस्तावेज़ पेश नहीं किया था; और इसलिए अनुसंधान अधिकारी ने मिथ्या विक्रय- पत्र की रचना के लिए संबंधित उपरोक्त अपराधों के लिए अभियुक्त के खिलाफ आरोप पत्र प्रस्तुत किया था।

5. विद्वान उपखण्ड मजिस्ट्रेट, मधुबनी ने आदेश दिनांक 14.12.2005 द्वारा उन्मोचित करने के आवेदन को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि आरोप विरचित करने के लिए पर्याप्त सामग्री थी। इसके बाद अभियुक्त ने दिनांक 14.12.2005 के आदेश को रद्द करने के लिए पटना उच्च न्यायालय के समक्ष दं.प्र.सं. की धारा 482 के तहत एक आवेदन दायर किया। इस दौरान, अभियुक्तगण के खिलाफ आरोप विरचित किये गये। उच्च न्यायालय ने यह कहते हुए याचिका खारिज कर दी कि विद्वान मजिस्ट्रेट को अपराध में अभियुक्त की संलिप्तता दिखाने वाली पर्याप्त सामग्री मिली थी। उक्त आदेश को विशेष अनुमति द्वारा इस अपील में चुनौती दी जा रही है।

6. इसलिए, विचार के लिए यह प्रश्न उठता है कि क्या अभिलेख पर मौजूद सामग्री प्रथम दृष्टया अभियुक्त के खिलाफ कोई अपराध बनाती है। अपीलार्थी का तर्क यह है कि यदि परिवाद और प्रथम सूचना रिपोर्ट में लगाए गए आरोप, भले ही पूरी तरह से सच भी माने जाएं तो भी कूटरचना (धारा 467 और 471) या छल (धारा 420) या अपमान (धारा 504) या सदोष- अवरोध (धारा 341) या उपहति पहुंचाना (धारा 323) और अन्य अपराध गठित के लिए कोई सामग्री नहीं थी और इसलिए, उनका आवेदन स्वीकार कर लिया जाना चाहिए था।

7. इस न्यायालय ने बार- बार परिवादियों की बढ़ती प्रवृत्ति की ओर ध्यान आकर्षित किया है, जो ऐसे मामलों को आपराधिक अपराध का जामा

पहनाने की कोशिश कर रहे हैं जो अनिवार्य रूप से और पूरी तरह से सिविल प्रकृति के हैं। जाहिर तौर पर या तो अभियुक्त पर दबाव बनाने के लिए, या अभियुक्त से दुश्मनी के कारण या अभियुक्त को उत्पीड़त करने के लिए होतो है। आपराधिक न्यायालयों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि उसके समक्ष कार्यवाही का उपयोग अंकों को बटोरेने/हिसाब- किताब निपटाने या सिविल विवादों को निपटाने के लिए पक्षकारों पर दबाव डालने के लिए नहीं किया जाए। लेकिन साथ ही, यह भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि सिविल प्रकृति के कई विवादों में आपराधिक अपराधों की सामग्री भी शामिल हो सकती है और यदि ऐसा है, तो उनका आपराधिक अपराधों के रूप में विचारण होगा, भले ही वे सिविल विवादों की श्रेणी में भी हों। [देखें: जी. सागर सूरी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य [2000 (2) एस सी सी 636] और इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन बनाम एनईपीसी इंडिया लिमिटेड [2006 (6) एस सी सी 736]। अतः उक्त सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए इस मामले की जांच करें-

<u>भारतीय दण्ड संहिता की धाराएं 467 और 471</u>

8. पहले हम इस बात पर विचार करें कि क्या परिवाद की बातें सच मानते हुए भी भारतीय दंड संहिता की धारा 467 या धारा 471 के तहत दंडनीय अपराध की सामग्री बनाती है? धारा 467 (जहाँ तक यह इस मामले के लिए सुसंगत है) में यह प्रावधान है कि जो कोई ऐसे दस्तावेज़

की, जिसका कोई मूल्यवान प्रतिभूति होना अभिप्रेरित है की कूटरचना करेगा, उसे आजीवन कारावास या किसी एक अवधि के लिए कारावास से दंडित किया जाएगा जिसे दस साल तक बढ़ाया जा सकता है और जुर्माना से भी दण्डनीय होगा। हमारे उद्देश्य के लिए प्रासंगिक धारा 471 में प्रावधान है कि जो कोई किसी ऐसी दस्तावेज़ को जिसके बारे में यह जानता या विश्वास करने का कारण रखता हो कि वह कूटरचित दस्तावेज़ है कपटपूर्वक या बेईमानी से असली के रूप में उपयोग में लायेगा उसे उसी तरह से दंडित किया जाएगा जैसे कि उसने ऐसा दस्तावेज़ की कूटरचना की हो। धारा 470 कूटरचित दस्तावेज़ को कूटरचना द्वारा बनाये गये मिथ्या दस्तावेज़ के रूप में परिभाषित करती है।

9. इन दो धाराओं में प्रयुक्त शब्द "कूटरचना" को भारतीय दंड संहिता की धारा 463 में परिभाषित किया गया है-

धारा- 463. 'कूटरचना'- (जो कोई मिथ्या दस्तावेज़ या इलेक्ट्रोनिक अभिलेख या दस्तावेज़ अथवा इलेक्ट्रोनिक अभिलेख के किसी भाग को इस आशय से रचतो है कि लोक को या किसी व्यक्ति को नुकसान या क्षति कारित की जाए) या किसी दावे या हक का समर्थन किया जाए, या यह कारित किया जाए कि कोई व्यक्ति सम्पत्ति अलग करे या कोई अभिव्यक्त या विवक्षित संविदा करे या इस आशय से रचतो है कि वह कपट करें या कपट किया जा सके, वह कूटररचना करता है। रिकॉर्ड की रचना करता है

या मिथ्या दस्तावेज़ या इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड के किसी भाग का निर्माण इस आशय से करता है कि उससे कोई क्षति या नुकसान कारित हो या किसी दावे या हक का समर्थन किया जाये, या यह कारित किया जाये कि कोई व्यक्ति संपत्ति अलग करे या कोई अभिव्यक्त या विवक्षित संविदा करे या इस आशय से रचतो है कि कपट करे, या कपट किया जा सके, यह कूटरचना करता है।

धारा- 464 मिथ्या दस्तावेज़ रचना- ' [उस व्यक्ति के बारे में यह कहा जाता है कि वह व्यक्ति मिथ्या दस्तावेज़ इलेक्ट्रोनिक अभिलेख रचतो है- पहला- जो बेईमानी से या कपटपूर्वक इस आशय से-

(क) किसी दस्तावेज़ या दस्तावेज़ के भाग को रचित, हस्ताक्षरित, मुद्रांकित या निष्पादित करता है,

(ख) किसी इलेक्ट्रोनिक अभिलेख या किसी इलेक्ट्रोनिक अभिलेख के भाग को रचित या प्रेषित करता है,

(ग) किसी इलेक्ट्रोनिक अभिलेख पर कोई 2 (इलेक्ट्रोनिक हस्ताक्षर) करता है,

(घ) दस्तावेज़ का निष्पादन या (इलेक्ट्रोनिक हस्ताक्षर) की प्रामाणिकता द्योतक करने वाला कोई चिन्ह लगाता है,

कि वह विश्वास किया जाए कि ऐसी दस्तावेज़ या दस्तावेज़ के भाग, इलेक्ट्रोनिक अभिलेख या (इलेक्ट्रोनिक हस्ताक्षर) की रचना, हस्ताक्षरण, मुद्रांकन, निष्पादन, प्रेषण, ऐसे व्यक्ति द्वारा या ऐसे व्यक्ति के प्राधिकार द्वारा किया गया था, जिसके द्वारा या जिसके प्राधिकार द्वारा उसकी रचना, हस्ताक्षरण, मुद्रांकन, निष्पादन या हस्ताक्षर न होने की बात वह जानता, अथवा द्वितीय- जो किसी दस्तावेज़ या इलेक्ट्रॉनिक अभिलेख के किसी तोत्विक भाग में परिवर्तन उसके द्वारा या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा, चाहे ऐसा व्यक्ति ऐसे परिवर्तन के समय जीवित हो या नहीं, उस दस्तावेज़ या इलेक्ट्रॉनिक अभिलेख के रचित, निष्पादित या 5 (इलेक्ट्रोनिक हस्ताक्षर) किये जाने के पश्चात् उसे रद्द करने द्वारा या अन्यथा विधिपूर्वक प्राधिकार के बिना, बेईमानी से या कपटपूर्वक करता है, अथवा तीसरा- जो किसी व्यक्ति द्वारा, यह जानते हुए कि ऐसा व्यक्ति किसी दस्तावेज़ या इलेक्ट्रोनिक अभिलेख की विषयवस्तु को या परिवर्तन के रूप को, चित्तविकृति या मत्ततो की हालत में होने के कारण जान नहीं सकता, या उस प्रवंचना के कारण, जो उससे की गई है, जानता नहीं है, उस दस्तावेज़ या इलेक्ट्रोनिक अभिलेख को बेईमानी से या कपटपूर्वक हस्ताक्षरित, मुद्रांकित, निष्पादित या परिवर्तित किया जाना या किसी या इलेक्ट्रोनिक अभिलेख पर (इलेक्ट्रोनिक हस्ताक्षर) कराया जाना कारित करता है।]

स्पष्टीकरण 1- किसी व्यक्ति का स्वयं अपने नाम का हस्ताक्षर करना कूटरचना की कोटि में आ सकेगा।

स्पष्टीकरण 2- कोई मिथ्या दस्तावेज़ किसी कल्पित व्यक्ति के नाम से इस आशय की रचना कि यह विश्वास कर लिया जाए कि वह दस्तावेज़ एक वास्तविक व्यक्ति द्वारा रची गयी थी, या किसी मृत व्यक्ति के नाम से इाशय से रचना कि वह विश्वास कर लिया जाए कि वह दस्तावेज़ उस व्यक्ति द्वारा उसके जीवनकाल में रची गयी थी, कूटरचना की कोटि में आ सकेगा।

[**स्पष्टीकरण 3-** इस धारा के प्रयोजनों के लिए 2 (इलेक्ट्रोनिक हस्ताक्षर करना) अभिव्यक्ति का वही अर्थ होगा, जो उसे सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 की धारा 2 की उपधारा (1) के खण्ड (घ) में समनुदेशित है।]

भारतीय दण्ड संहिता धारा 467 व धारा 471 के तहत अपराध के लिए पूर्ववर्ती शर्त 'कूटरचना' है। 'कूटरचना' की पूर्ववर्ती शर्त है एक मिथ्या दस्तावेज़ (या मिथ्या इलेक्ट्रोनिक रिकॉर्ड या उसका एक भाग की रचना है)। यह मामला किसी भी मिथ्या इलेक्ट्रोनिक अभिलेख से सम्बन्धित नहीं है। इसलिए प्रश्न यह है कि क्या पहले अभियुक्त, दो विक्रय- विलेखों को निष्पादित करने और पंजीकृत करने में, जो एक सम्पत्ति को बेचने के लिए

अभिप्रेत है, (भले ही यह माना जाए कि यह उसका नहीं था), कहा जा सकता है कि दूसरे अभियुक्त के साथ मिलीभगत में झूठे दस्तावेज़ बनाये और निष्पादित किये।

10. दण्ड संहिता की धारा 464 के विश्लेषण से पतो चलतो है कि यह मिथ्या दस्तावेजों को तीन श्रेणियों में विभाजित करता हैः-

(10.1) पहला वह है जहाँ कोई व्यक्ति बेईमानी से या कपटपूर्वक इस आशय से दस्तावेज़ रचतो है या निष्पादित करता है कि यह विश्वास दिलाना कि ऐसा दस्तावेज़ किसी अन्य व्यक्ति द्वारा या किसी अन्य व्यक्ति के अधिकार द्वारा रचा या निष्पादित किया गया था, जिसके द्वारा या जिसके अधिकार से वह जानता है कि यह नहीं बनाया गया था या निष्पादित नहीं किया गया था।

(10.2) दूसरा वह है जहाँ कोई व्यक्ति किसी दस्तावेज़ की रचना अथवा निष्पादन के पश्चात, विधिक प्राधिकार के बिना दस्तावेज़ के किसी भाग में निरस्तीकरण अथवा अन्यथा, उसमें परिवर्तन करता है।

(10.3) तीसरा कि जो व्यक्ति बेईमानी से या कपटपूर्वक किसी ऐसे व्यक्ति से किसी दस्तावेज़ को मुद्रांकित, निष्पादित या परिवर्तित किया जाना कारित करता है जो चितविकृत्ति या मत्ततो या प्रवंचना, जो उससे की गई है, के कारण दस्तावेज़ की विषयवस्तु को नहीं जानता है।

11. संक्षेप में, किसी व्यक्ति को 'मिथ्या दस्तावेज़' बनाने वाला कहा जाता है, यदि (i) उसने किसी और के होने का दावा करते हुए या किसी और द्वारा अधिकृत होने का दावा करते हुए दस्तावेज़ बनाया या निष्पादित किया हो; या (ii) उसने किसी दस्तावेज़ में परिवर्तन या छेड़छाड़ की; या (iii) उसने बेईमानी या कपटपूर्वक ऐसे व्यक्ति से दस्तावेज़ प्राप्त किया जो अपनी इंद्रियों पर नियंत्रण नहीं रखता।

12. प्रथम अपीलकरता द्वारा निष्पादित विक्रय विलेख, स्पष्ट रूप से और स्वाभाविक रूप से 'मिथ्या दस्तावेजों की दूसरी और तीसरी श्रेणी के अंतर्गत नहीं आती हैं। इसलिए यह देखा जाना शेष है कि क्या परिवादी का यह दावा है कि पहले अभियुक्त द्वारा विक्रय पत्र का निष्पादन, जिसका जमीन से कोई लेना- देना नहीं था, परिवादी की जमीन पर कब्जा करने के इरादे से दस्तावेजों की कूटरचना करने के बराबर है (और अभियुक्त संख्या दो व पाँच ने करता, गवाह, लिपिक/मुंशी और स्टांप विक्रेताओं के रूप में उक्त विक्रय पत्र के निष्पादन और पंजीकरण में प्रथम अभियुक्त के साथ मिलीभगत की) मामले को प्रथम श्रेणी में लाएगा। किसी विक्रय विलेख को निष्पादित करने वाले व्यक्ति का यह दावा कि अंतरित संपत्ति उसकी संपत्ति है, और एक व्यक्ति द्वारा स्वामी का प्रतिरूपण करके या विलेख निष्पादित करने के लिए स्वामी द्वारा अधिकृत या सशक्त होने का मिथ्या दावा करके विक्रय विलेख निष्पादित करने के बीच एक आधारभूत अंतर है। जब कोई

व्यक्ति किसी संपत्ति को अपना बतोते हुए दस्तावेज़ निष्पादित करता है, वहां दो संभावनाएं हैं पहली यह कि वह सद्भाविक रूप से विश्वास करता है कि संपत्ति वास्तव में उसकी है। दूसरी यह कि वह बेईमानी से या कपटपूर्वक इसे अपना होने का दावा करता है, भले ही वह जानता हो कि यह उसकी संपत्ति नहीं है। लेकिन 'मिथ्या दस्तावेज़' की प्रथम श्रेणी में आने के लिए, यह पर्याप्त नहीं है कि कोई दस्तावेज़ बेईमानी या कपटपूर्वक बनाया या निष्पादित किया गया है। एक अन्य आवश्यकता यह है कि इसे इस आशय से बनाया जाना चाहिए कि यह विश्वास दिलाया जाए कि ऐसा दस्तावेज़ किसी व्यक्ति द्वारा या उसके प्राधिकार द्वारा बनाया या निष्पादित किया गया था, जिसके द्वारा या जिसके प्राधिकार द्वारा वह जानता है कि यह नहीं बनाया गया था या निष्पादित ही किया गया था, जब किसी व्यक्ति द्वारा ऐसी संपत्ति का दावा करते हुए दस्तावेज़ निष्पादित किया जाता है जो उसकी नहीं है, तो वह यह दावा नहीं कर रहा है कि वह कोई और है और न ही वह यह दावा कर रहा है कि वह किसी और द्वारा अधिकृत है। इसलिए, ऐसे दस्तावेज़ का निष्पादन (जिसका तात्पर्य कुछ ऐसी संपत्ति से है जिसका वह स्वामी नहीं है) मिथ्या दस्तावेज़ का निष्पादन नहीं है जैसा कि भारतीय दण्ड संहिता की धारा 464 के तहत परिभाषित किया गया है। यदि जो निष्पादित किया गया है वह मिथ्या दस्तावेज़ नहीं है, तो कोई

कूटरचना नहीं है। यदि कोई कूटरचना नहीं है, तो न तो भारतीय दण्ड संहिता की धारा 467 और न ही धारा 471 आकर्षित होती है।

भारतीय दण्ड संहिता की धारा 420

13. अब इसकी जांच की जावे कि क्या छल के अपराध के तत्व विद्यमान है "छल" के अपराध के आवश्यक तत्व इस प्रकार हैं: (i) मिथ्या या भ्रामक प्रतिनिधित्व करके या बेईमानी से छिपाकर या किसी अन्य कार्य या विलोपन द्वारा किसी व्यक्ति को धोखा देना; (ii) उस व्यक्ति को किसी भी संपत्ति को वितरित करने या किसी भी व्यक्ति द्वारा उसके प्रतिधारण के लिए सहमति देने के लिए कपटपूर्वक या बेईमानी से प्रेरित करना या जानबूझकर उस व्यक्ति को ऐसा करने के लिए प्रेरित करना या कुछ भी करने के लिए छोड़ देना जो वह नहीं करता या यदि वह होतो तो छोड़ देता अगर धोखा नहीं होतो और (iii) ऐसा कार्य या लोप उस व्यक्ति के शारीरिक मानसिक ख्याति सम्बन्धी या सांपत्तिक नुकसान या उपहति पहुंचायी है। भारतीय दण्ड संहिता की धारा 420 के तहत अपराध गठित करने के लिए, न केवल कपट होनी चाहिए, बल्कि ऐसी कपट के परिणामस्वरूप, अभियुक्त को बेईमानी से धोखा देने वाले व्यक्ति को प्रेरित करना चाहिए (i) किसी भी व्यक्ति को कोई संपत्ति देने के लिए, या (ii) किसी मूल्यवान प्रतिभूति (या हस्ताक्षरित या मुहरबंद कोई भी चीज़ जो मूल्यवान सुरक्षा में परिवर्तित

होने में सक्षम है) को पूर्णतः तरह या आंशिक रूप से बनाना, परिवर्तित या नष्ट करना।

14. जब किसी संपत्ति पर स्वामित्व का दावा करते हुए विक्रय विलेख निष्पादित किया जाता है, तो ऐसे विक्रय विलेख के तहत करता के लिए यह आरोप लगाना संभव हो सकता है कि विक्रेताओं ने स्वामित्व का मिथ्या प्रतिनिधित्व करके और विक्रय प्रतिफल का हिस्सा बनने के लिए कपटपूर्वक उत्प्रेरित कर उसके साथ छल किया है। लेकिन इस मामले में परिवाद करता की ओर से यह नहीं है। दूसरी ओर, खरीदने वाले को सह अभियुक्त बनाया गया है। परिवादी का मामला यह नहीं है कि किसी अभियुक्त ने सम्पत्ति परिदत्त करने के लिए उसे मिथ्या या बेईमानीपूर्ण उत्प्रेरित किया है या किसी अन्य कार्य या लोप के जरिए छल करने की कोशिश की, न ही उसका मामला यह है कि उन्होंने उसे कोई कपटपूर्वक या बेईमानीपूर्वक संपत्ति या किसी व्यक्ति द्वारा उसे अपने पास रखने के लिए सहमति देना या जानबूझकर उसे ऐसा कुछ करने या न करने के लिए प्रेरित करना जो वह नहीं करता या छोड़ देता यदि उसे इस प्रकार उत्प्रेरित न किया होतो। न ही शिकायतकरता ने यह आरोप लगाया कि पहले अपीलकरता ने विक्रय- पत्र को निष्पादित करते समय शिकायतकरता होने का नाटक/दिखावा किया था। इसलिए, यह नहीं कहा जा सकता है कि पहला अभियुक्त दूसरे अभियुक्त के पक्ष में विक्रय पत्र निष्पादित करने के

कारण या दूसरा अभियुक्त करता होने के कारण, या तीसरे चौथे और पांचवें अभियुक्त गवाह होने के कारण शिकायत करता के साथ छल किया हो। चूंकि भारतीय दण्ड संहिता की धारा 415 में बताए गए छल के तत्व नहीं पाए गए हैं, इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि भरतीय दण्ड संहिता की धारा 417, 418, 419 या 420 के तहत अपराध दंडनीय था।

<u>एक स्पष्टीकरण</u>

> "15. जब हम कहते हैं कि किसी व्यक्ति द्वारा किसी ऐसी संपत्ति को, जो उसकी नहीं है, उसे अपनी संपत्ति के रूप में हस्तांतरित करने के उद्देश्य से विक्रय विलेख का निष्पादन मिथ्या दस्तावेज़ नहीं बना रहा है और इसलिए 'कूटरचना' नहीं है, तो हमें यह मानने के रूप में नहीं समझा जाना चाहिए कि ऐसा कृत्य कभी भी दण्डनीय अपराध नहीं हो सकता। यदि कोई व्यक्ति किसी संपत्ति को यह जानते हुए बेचता है कि यह उसकी नहीं है, और इस तरह उस संपत्ति को खरीदने वाले व्यक्ति को धोखा देता है, तो जिसके साथ धोखा किया गया है व्यक्ति, यानी खरीदार, शिकायत कर सकता है कि विक्रेताओं ने धोखाधड़ी का छलपूर्वक कार्य किया है। लेकिन कोई तीसरा पक्ष जो विलेख के तहत करता नहीं है, ऐसी शिकायत करने में सक्षम नहीं हो सकता है।

भारतीय दण्ड संहिता में 'कपट' शब्द को परिभाषित नहीं किया गया है। 'कपट' की शब्दकोश परिभाषा है "जानबूझकर की गई धोखाधड़ी, विश्वासघात या लाभ प्राप्त करने के इरादे से किया गया छल भारतीय संविदा अधिनियम 1872 की धारा 17 के अनुबंध के एक पक्ष के संदर्भ में 'कपट' को परिभाषित करती है। डॉ. विमला बनाम दिल्ली प्रशासन- एआईऔर 1963 ऐसेसी 1572 में, इस न्यायालय ने अभिव्यक्ति 'कपट' का अर्थ इस प्रकार समझाया, "कपट" अभिव्यक्ति में दो तत्व शामिल हैं, अर्थात्, धोखा और धोखा खाए व्यक्ति को क्षति। और्थिक हानि के अलावा क्षति कुछ और भी है। सम्पत्ति चाहे चल हो या अचल, या धन का, और इसमें किसी भी व्यक्ति के शरीर, मन, प्रतिष्ठा या ऐसे अन्य को होने वाली कोई भी हानि शामिल होगी। संक्षेप में, यह एक गैर- सम्पतिक या गैर- और्थिक हानि है। धोखेबाज को कोई लाभ या फायदा लगभग हमेशा धोखेबाज को नुकसान या नुकसान पहुंचाएगा। यहां तक कि उन दुर्लभ मामलों में जहां धोखेबाज को कोई लाभ या फायदा होतो है, लेकिन धोखेबाज को कोई नुकसान नहीं होतो है, दूसरी शर्त संतुष्ट होती है।"

उपरोक्त परिभाषा संक्षेप में यूपी राज्य बनाम रणजीत सिंह- 1999 (2) एस सी सी 617 में दोहराई गई थी।

16. हालांकि भारतीय दंड संहिता धारा 24 में 'बेईमानी' शब्द के विशेषण रूप 'बेईमानी' को इस प्रकार परिभाषित करती है: " जो कोई इस आशय से कोई कार्य करता है कि एक व्यक्ति को सदोष अभिलाभ कारित करे या अन्य किसी व्यक्ति को सदोष हानि कारित करे, वह उस कार्य को, "बेईमानी से" करता है, यह कहा जाता है। शब्द "कपटपूर्वक" का प्रयोग अधिकतर "बेईमानी" शब्द के साथ किया जाता है जिसे धारा 25 में इस प्रकार परिभाषित किया गया है: ("कोई व्यक्ति किसी बात को कपटपूर्वक करता है, यह कहा जाता है, यदि वह उस बात को कपट करने के आशय से करता है, अन्यथा नहीं"।) 'कपट' करना या कपटपूर्वक कृत्य करना दंड संहिता के तहत अपने आप में अपराध नहीं है, लेकिन धोखाधड़ी (या कपट और बेईमानी से) किए गए विभिन्न कार्यों को अपराध माना जाता है। इनमें शामिल हैं:-

(i) कपटपूर्वक संपत्ति का अपसारण या छिपाना (धारा 206, 421, 424)

(ii) सम्पत्ति के अभिगृहीत किये जाने से निवारत करने के लिए कपटपूर्वक दावा (धारा 207)।

(iii) कपटपूर्ण डिक्री अभिप्राप्त प्राप्त करना (धारा 208 और 210)

(iv) कपटपूर्वक कूटकृत सिक्के का कब्ज़ा/परिदान (धारा 239, 240, 242 और 243)।

(v) कपटपूवर्क सिक्के का वजन कम या परिवर्तन करना (धारा 246 से 253)

(vi) कपटपूर्वक सरकारी स्टाम्प के कृत्य (धारा 255- 261)

(vii) खोटे बाट या माप का कपटपूर्वक उपयोग (धारा 264 से 266)

(viii) छल (धारा 415 से 420)

(ix) ऋण को लेनदारों के लिए उपलब्ध होने से कपटपूर्वक निवारित करना (धारा 422)।

(x) अन्तरण ऐसे विलेख का जिसमें प्रतिफल के सम्बन्ध में मिथ्या कथन अन्तर्विष्ट है कपटपूर्वक निष्पादन (धारा 423)।

(xi) कूटरचना या मिथ्या दस्तावेज़ का निष्पादित (धारा 463 से 471 और 474)

(xii) मूल्यवान प्रतिभूति इत्यादि को कपटपूर्वक रद्द, नष्ट आदि करना (धारा 477)

(xiii) कपटपूर्वक विवाहित होने का कर्म करना (धारा 496)।

इसका मतलब यह है कि केवल यह आरोप लगाना या दिखाना, कि किसी व्यक्ति ने कपटपूर्वक काम किया है, यह नहीं माना जा सकता है कि उसने संहिता या किसी अन्य कानून के तहत दंडनीय अपराध किया है, जब तक कि उस कपटपूर्वक वाले कार्य को संहिता या अन्य कानून के तहत अपराध के रूप में निर्दिष्ट नहीं किया जाता है।

<u>भारतीय दण्ड की धारा 504</u>

17. प्राथमिकी में लगाए गए आरोप, भारतीय दंड संहिता की धारा 504 के तहत अपराध के तत्व भी नहीं बनाते हैं। धारा 504 में शांति भंग कराने का प्रकोपित करने के आशय से अपमान का उल्लेख है। परिवादी का आरोप है कि जब उसने अभियुक्त 1 और 2 से विक्रय- पत्र के बारे में पूछताश की, तो उन्होंने कहा कि वे विक्रय- पत्र के आधार पर जमीन का कब्जा प्राप्त कर लेंगे और वह जो चाहे कर सकता है। अपीलार्थी 1 और 2 की और से दिए गए बयान के अनुसार, इसे "शांति भंग करने के आशय से अपमान" नहीं कहा जा सकता। अभियुक्त की और से दिया गया बयान, चाहे वह सच हो, केवल पहले अपीलकरता द्वारा दूसरे अपीलकरता के पक्ष में विक्रय- पत्र के निष्पादन के परिणाम का जिक्र करने वाला एक कथन था।

<u>निष्कर्ष</u>

18. यदि परिवाद में दिए गए कथनों को सत्य मान लिया जाए, तो भारतीय दण्ड संहिता की धाराओं 420, 467, 471 और 504 के तहत कोई अपराध नहीं बनता है, लेकिन तकनीकी रूप से भारतीय दण्ड संहिता की धारा 341 के तहत सदोष- अवरोध और धारा 323 में उपहति कारित करने के अपराधों के तथ्व दर्शित हो सकते है।

19. ऊपर बताए गए कारणों से, अपील आंशिक रूप से स्वीकार की जाती है। उच्च न्यायालय का आदेश अपास्त किया जाता है. विद्वान उपखण्ड मजिस्ट्रेट के दिनांक 14.12.2005 के आदेश को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 420, 467, 471 और 504 के तहत अपराध के रूप में अपास्त किया जाता है। परिणामतः, उन धाराओं के तहत लगाए गए आरोप भी निरस्त किये जाते हैं। आदेश दिनांक 14.12.2005 और भा.दं.सं. की धाराओं 323 और 341 के तहत अपराध के आरोपों को अबाधित छोड़ दिया गया है। तदनुसार अपील आंशिक रूप से स्वीकार की जाती है।

अपील आंशिक रूप से स्वीकृत

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी स्नेहा जाखड़ (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।